राजस्थान उच्च न्यायालय जयपुर पीठ

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 6812/2010

प्रबंध समिति-सचिव मोहता स्नातकोत्तर **महाविद्यालय**, सादुलपुर, जिला चुरू, के **माध्यम** से।

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. शिव कुमार सहल पुत्र श्री माली राम सहल, निवासी सेकसरिया गर्ल्स कॉलेज के सामने, कोर्ट रोड, चिड़ावा, जिला झुंझुनू।
2. **निदेशक**, कॉलेज शिक्षा, राजस्थान जयपुर।
3. **राजस्थान** गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्था **न्यायाधिकरण**, जयपुर।

----प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्ता (गण) की ओर से	:	डॉ. पी.सी. जैन, सह जीशान खान जी
प्रत्यर्थी (गण) की ओर से	:	श्री **प्रहलाद** सिंह, सह श्री गौरव शर्मा

माननीय न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढंड

आदेश **सुरक्षित** करने की तिथि : **17/01/2023**

आदेश **उच्चारित** करने की तिथि : **25/01/2023**

रिपोर्टेबल

आदेश

(1) यह **याचिका**, याचिकाकर्ता द्वारा **राजस्थान** गैर-सरकारी शैक्षणिक **संस्थान** ट्रिब्यूनल, जयपुर (संक्षेप में "ट्रिब्यूनल") द्वारा **पारित** दिनांक 03.02.2010 के **आक्षेपित** निर्णय के **खिलाफ** दायर की गई है, जिसके तहत प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा आवेदन दायर किया गया है जिसमें राजस्थान गैर-सरकारी **शैक्षणिक** संस्थान अधिनियम, 1989 (**संक्षेप** में "**अधिनियम**") की धारा 21 के अतंर्गत अनुमति दी गई है और याचिकाकर्ता को 8000-13500 के वेतनमान के तहत प्रत्यर्थी के वेतनमान को 01.09.1996 को **राजस्थान**

सिविल सेवा (संशोधित वेतनमान) नियम 1998 (संक्षेप में "1998 के नियम") के तहत बकाया राशि के साथ 11.01.2020 से तय करने का निर्देश दिया गया है। इसके अलावा आवेदन दायर करने की तारीख से प्रभावी यूजीसी के वरिष्ठ वेतनमान के साथ-साथ योजनाओं के संदर्भ में चयन वेतनमान और 6% प्रतिवर्ष की दर से ब्याज के साथ विशेषाधिकार छुट्टी का भुगतान करने का निर्देश जारी किया गया है और अन्य निर्देश भी जारी किए गए हैं।

(2) याचिकाकर्ता एक परोपकारी संस्था है और प्रत्यर्थी को याचिकाकर्ता कॉलेज द्वारा 15.10.1975 को पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया था। प्रत्यर्थी सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने के बाद 31.10.2002 को उक्त पद से सेवानिवृत्त हो गया। उन्होंने अधिनियम की धारा 21 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया जिसे ट्रिब्यूनल ने दिनांक 03.02.2010 के आक्षेपित निर्णय के तहत आंशिक रूप से अनुमति दी है।

(3) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि निदेशक, कॉलेज शिक्षा द्वारा दिनांक 04.04.1994 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी को पुस्तकालयाध्यक्ष के पद पर अयोग्य माना गया था और उक्त आदेश को प्रत्यर्थी द्वारा कभी चुनौती नहीं दी गई थी। अधिवक्ता का कहना है कि अधिनियम की धारा 21 के तहत प्रत्यर्थी द्वारा दायर आवेदन अधिनियम की धारा 18 और 19 के मद्देनजर सुनवाई योग्य नहीं है। प्रत्यर्थी धारा 19 के तहत अपील दायर कर सकता था और सीमा 30 दिन थी लेकिन अपील दायर करने के बजाय, प्रत्यर्थी ने सीमा अवधि बीतने के बाद धारा 21 के तहत आवेदन प्रस्तुत किया है। अधिवक्ता का कहना है कि अन्यथा भी प्रत्यर्थी 31.10.2002 को सेवानिवृत्त हो गया लेकिन उसने समय बाधित आवेदन दायर किया। अधिवक्ता का कहना है कि हालांकि, अधिनियम के तहत कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है, लेकिन सीमा अधिनियम के अनुच्छेद 137 के तहत सीमा अवधि तीन वर्ष थी और प्रत्यर्थी द्वारा तीन वर्ष के बाद आवेदन दायर किया गया है। अधिवक्ता का कहना है कि याचिकाकर्ता को जिरह का कोई अवसर प्रदान नहीं किया गया और अधिनियम की धारा 25 के तहत निहित प्रावधान का पालन नहीं किया गया जिसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है। अपने तर्कों के समर्थन में उन्होंने टैगोर बाल निकेतन माध्यमिक विद्यालय बनाम राजस्थान राज्य 2018 (1) डब्ल्यूएलसी (राजस्थान) 19 में प्रकाशित के मामले में इस

न्यायालय के निर्णय पर अवलंब जताया है। अधिवक्ता का कहना है कि ट्रिब्यूनल ने आक्षेपित निर्णय पारित करते समय कोई गणना नहीं की गई है, इसलिए याचिकाकर्ता के लिए ट्रिब्यूनल द्वारा दी गई राशि की गणना करना संभव नहीं होगा।

(4) इसके विपरीत, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता/संस्था द्वारा अधिनियम की धारा 18 के तहत कोई आदेश पारित नहीं किया गया था, इसलिए धारा 19 के तहत कोई अपील सुनवाई योग्य नहीं थी। अधिवक्ता का कहना है कि प्रत्यर्थी की शिकायत के निवारण के लिए, अधिनियम की धारा 21 के तहत एक आवेदन दायर करना ही एकमात्र उपाय था। अधिवक्ता का कहना है कि प्रत्यर्थी बार-बार अभ्यावेदन दायर करके याचिकाकर्ता के सामने अपनी शिकायत रख रहा था। जब कोई ध्यान नहीं दिया गया तो उन्होंने ट्रिब्यूनल का दरवाजा खटखटाया और अधिनियम की धारा 21 के तहत आवेदन प्रस्तुत किया, जिसे उचित रूप से स्वीकार कर लिया गया है। अधिवक्ता का कहना है कि इस तर्क में कोई दम नहीं है कि प्रत्यर्थी पुस्तकालयाध्यक्ष के पद पर नियुक्ति के लिए पात्र नहीं था क्योंकि निदेशक, कॉलेज शिक्षा ने वर्ष 1994 में ऐसा कहा था। अधिवक्ता का कहना है कि प्रत्यर्थी ने उक्त पद पर 15.10.1975 से 31.10.2002 तक काम किया था। अधिवक्ता का कहना है कि इस अवधि के दौरान प्रत्यर्थी की सेवाएँ बेदाग रहीं और उनकी सेवानिवृत्ति के समय उन्हें पूरा वेतन और सेवानिवृत्ति बकाया का भुगतान किया गया। अधिवक्ता का कहना है कि जब उन्हें यूजीसी वेतनमान के तहत वेतनमान, चयन वेतनमान और छुट्टी नकदीकरण के भुगतान का लाभ नहीं दिया गया, तो उन्होंने अपनी शिकायत के निवारण के लिए ट्रिब्यूनल से संपर्क किया। अपनी दलीलों के समर्थन में उन्होंने निम्नलिखित निर्णय पर अवलंब जताया है:-

(i) भारत संघ एवं अन्य बनाम तरसेम सिंह (2008) 8 एससीसी 648

(ii) राजस्थान विश्वविद्यालय और कॉलेज शारीरिक शिक्षा शिक्षक एसोसिएशन एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य
[एकलपीठ सिविल रिट याचिका क्रमांक 608/1982 पर दिनांक 08.10.1990 को निर्णय लिया गया]

(iii) तारा चंद एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य

[एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 4956/2008 पर 20.08.2010 को निर्णय लिया गया]

(iv) कैलाश चंद्र घुसर बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य
[एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 20646/2012 पर 20.11.2017 को निर्णय लिया गया]

(5) प्रतिद्वंद्वी की दलीलों को सुना और उन पर विचार किया।

(6) निर्विवाद तथ्य यह है कि ट्रिब्यूनल के समक्ष प्रत्यर्थी की मूल शिकायत सरकारी कॉलेजों में पुस्तकालयाध्यक्ष को यूजीसी वेतनमान के रूप में दिए जाने वाले वेतनमान और भत्तों में निर्धारण प्राप्त करने के लिए थी। राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थाएं (मान्यता, सहायता अनुदान एवं सेवा शर्तें आदि) नियम, 1993 के अधिनियम की धारा 29 एवं नियम 34 के अनुसार सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थानों में कार्यरत कर्मचारियों के वेतनमान एवं भत्ते-सरकारी शिक्षा संस्थान जैसे ही हैं। यह तथ्य भी विवादित नहीं है कि राजस्थान सरकार ने 24.04.1993 एवं 05.08.1993 को एक परिपत्र जारी कर 8 एवं 16 वर्ष की सेवा पूर्ण करने वाले पुस्तकालयाध्यक्षों को यूजीसी वेतनमान के अनुसार क्रमोन्नत वेतनमान देने की अनुशंसा की थी। यहां तक कि इस न्यायालय ने लक्ष्मी नारायण शर्मा और अन्य बनाम राजस्थान राज्य और अन्य, 2002 (1) आरएलआर 771 के मामले में पैरा 16 में निम्नानुसार व्यवस्था दी है:-

> "उपरोक्त चर्चाओं के परिणामस्वरूप, यह रिट याचिका सफल होती है और इसकी अनुमति दी जाती है। इसके द्वारा यह घोषित किया जाता है कि याचिकाकर्तागण 01.04.1980 से प्रभावी उन्नत यूजीसी वेतनमान अर्थात रुपये 700-1600 के पात्र हैं। यदि 01.04.1980 के बाद, इस उन्नत वेतनमान को संशोधित किया जाता है, तो याचिकाकर्तागण भी संशोधित वेतनमान के पात्र होंगे। प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिया जाता है कि वे याचिकाकर्तागण के वेतन को रुपये 700-1600 प्रभावी 01.04.1980 या उनकी नियुक्ति की तारीख से, जो भी बाद में हो, के वेतनमान में संशोधित और तय करें। यदि वेतनमान को और संशोधित किया जाता है, तो प्रत्यर्थीगण को समय-समय पर संशोधित वेतनमान के अनुसार याचिकाकर्तागण के वेतन को संशोधित करने का निर्देश दिया जाए। वेतन निर्धारण की बकाया राशि का निर्धारण कर तदनुसार याचिकाकर्तागण को भुगतान किया जाना है। याचिकाकर्तागण रिट याचिका दायर करने की तारीख अर्थात 01.12.1998 से वेतन निर्धारण पर बकाया पर 12% प्रतिवर्ष की दर से ब्याज पाने के भी पात्र होंगे। बकाया वेतन निर्धारण पर

याचिकाकर्तागण को देय ब्याज की राशि भी प्रत्यर्थीगण द्वारा निर्धारित की जाएगी। यह सभी कार्य इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर प्रत्यर्थीगण द्वारा किए और पूरे किए जाने हैं।"

(7) यहां यह ध्यान देने योग्य है कि लक्ष्मी नारायण (सुप्रा.) के निर्णय को दिनांक 15.01.2010 के आदेश के तहत माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष राज्य द्वारा प्रस्तुत एसएलपी में बरकरार रखा गया था। इसलिए, ट्रिब्यूनल ने माना कि प्रत्यर्थी वरिष्ठ वेतन और चयन वेतन पाने का पात्र है।

(8) याचिकाकर्ता की मुख्य शिकायत यह है कि जब कॉलेज शिक्षा विभाग ने याचिकाकर्ता को पुस्तकालयाध्यक्ष के पद पर अयोग्य पाया तो उसके द्वारा दावा किए गए लाभों को बढ़ाने के लिए ट्रिब्यूनल के पास कोई अवसर उपलब्ध नहीं था। तथ्य सही है कि निदेशक, कॉलेज शिक्षा द्वारा अपने पत्र दिनांक 04.04.1994 में "अयोग्य" के रूप में समर्थन किया गया था, लेकिन फिर भी याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी को सेवाएं जारी रखने की अनुमति दी। प्रत्यर्थी को 01.01.2019 से 15.10.1975 से उनकी सेवानिवृत्ति की तिथि अर्थात 31.10.2002 तक सेवा में बने रहने की अनुमति दी गई। याचिकाकर्ता द्वारा उन्हें पुस्तकालयाध्यक्ष के पद से हटाने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की गई और प्रत्यर्थी को उनकी सेवानिवृत्ति की आयु और वेतन और सेवानिवृत्ति बकाया का भुगतान होने तक संस्थान में अपनी सेवाएं जारी रखने की अनुमति दी गई। इसलिए, याचिकाकर्ता को अपनी ही कार्रवाई से रोक दिया गया है और उसे यह तकनीकी आपत्ति लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इन 27 वर्षों में प्रत्यर्थी की सेवाएँ निरंतर और बेदाग रहीं।

(9) इस न्यायालय को याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्क में कोई बल नहीं मिला कि अधिनियम की धारा 21 के तहत आवेदन सुनवाई योग्य नहीं था, जबकि धारा 19 के तहत अपील सुनवाई योग्य थी। यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि अधिनियम की धारा 19 के तहत अपील अधिनियम की धारा 18 के तहत किसी कर्मचारी को हटाने, बर्खास्तगी या रैंक में कमी के आदेश के खिलाफ की जाती है, जबकि इस मामले में याचिकाकर्ता द्वारा ऐसा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी कर्मचारी के खिलाफ संस्थान, इसलिए अधिनियम की धारा 19 के तहत अपील दायर करने के लिए प्रत्यर्थी के पास कोई अवसर उपलब्ध नहीं था। प्रत्यर्थी की शिकायत के निवारण

के लिए, उसके पास उपलब्ध एकमात्र उपाय अधिनियम की धारा 21 के तहत एक आवेदन दायर करना था और उसने न्यायाधिकरण के समक्ष आवेदन दायर किया है।

(10) सुविधा के लिए, अधिनियम की धारा 21 यहां उद्धृत की गई है:-

"न्यायाधिकरण को आवेदन.-

(1) जहां किसी मान्यता प्राप्त संस्थान के प्रबंधन और उसके किसी कर्मचारी के बीच सेवा शर्तों के संबंध में कोई विवाद है, कर्मचारी का प्रबंधन निर्धारित तरीके से ट्रिब्यूनल और ट्रिब्यूनल के निर्णय के लिए आवेदन कर सकता है जो वहीं अंतिम होगा।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्रकृति का कोई भी विवाद और धारा 19 में निर्दिष्ट प्रकृति की कोई अपील, जो इस अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले राज्य सरकार या राज्य सरकार के किसी अधिकारी के समक्ष लंबित हो, ऐसी शुरुआत के बाद जितनी जल्दी हो सके; अपने निर्णय के लिए ट्रिब्यूनल को हस्तांतरित करके।"

(11) अधिनियम की धारा 21 की उपधारा (1) में कोई संदेह नहीं है, कर्मचारी का प्रबंधन ट्रिब्यूनल के समक्ष आवेदन करने के लिए अधिकृत है, लेकिन यदि एक पक्ष को आवेदन दायर करने का अधिकार दिया गया है, तो दूसरे पक्ष को आवेदन करने का अधिकार दिया गया है। उसी प्रावधान के तहत राहत मांगने का निहित अधिकार है और इस कारण से, यदि सहायता प्राप्त संस्थान के कर्मचारी ने ट्रिब्यूनल के समक्ष अधिनियम की धारा 21 के तहत एक आवेदन दायर किया है और उक्त आवेदन पर ट्रिब्यूनल द्वारा कोई आदेश पारित किया जाता है, तो वह आदेश को क्षेत्राधिकार के बिना नहीं कहा जा सकता।

(12) इस प्रकार, यह माना जाता है कि ट्रिब्यूनल ने अधिनियम की धारा 21 के तहत दायर प्रत्यर्थी के आवेदन पर विचार करने और निर्णय लेने में कोई त्रुटि नहीं की है।

(13) वेतन एवं चयन वेतनमान एवं अन्य सेवा लाभ प्राप्त करने के लिए प्रत्यर्थी ने याचिकाकर्ता प्रबंधन को अपनी शिकायत के निवारण के लिए विभिन्न अभ्यावेदन प्रस्तुत किए लेकिन जब कोई ध्यान नहीं दिया गया, तो इस बार-बार होने वाली गलती के लिए प्रत्यर्थी ने अधिनियम की धारा 21 के तहत आवेदन दायर करने के लिए ट्रिब्यूनल का

दरवाजा खटखटाया।

(14) देरी के मुद्दे से निपटने के दौरान, ट्रिब्यूनल ने भारत संघ बनाम तरसेम सिंह (सुप्रा.) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर अवलंब किया है, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने पैरा 7 में निम्नानुसार निर्णय सुनाया:-

> "संक्षेप में, आम तौर पर, विलंबित सेवा संबंधी दावे को देरी और खामियों (जहां रिट याचिका दायर करके उपाय मांगा जाता है) या सीमा (जहां प्रशासनिक न्यायाधिकरण में एक आवेदन द्वारा उपाय मांगा जाता है) के आधार पर खारिज कर दिया जाएगा। उक्त नियम के अपवादों में से एक निरंतर ग़लती से संबंधित मामले हैं। जहां सेवा संबंधी दावा किसी निरंतर ग़लती पर आधारित हो, तो राहत तब भी दी जा सकती है, जब सुधार की मांग करने में लंबी देरी हो, उस तारीख के संदर्भ में, जिस तारीख को ग़लती शुरू हुई थी, यदि ऐसी लगातार ग़लती से चोट का निरंतर स्रोत बनता है। लेकिन अपवाद का एक अपवाद भी है। यदि शिकायत किसी आदेश या प्रशासनिक निर्णय के संबंध में है जो कई अन्य लोगों से संबंधित है या उन्हें प्रभावित करती है, और यदि मुद्दे को फिर से खोलने से तीसरे पक्ष के तय अधिकारों पर असर पड़ेगा, तो दावे पर विचार नहीं किया जाएगा। उदाहरण के लिए, यदि मामला भुगतान या वेतन या पेंशन के पुनर्निर्धारण से संबंधित है, तो देरी के बावजूद राहत दी जा सकती है क्योंकि यह तीसरे पक्ष के अधिकारों को प्रभावित नहीं करता है। लेकिन यदि दावे में वरिष्ठता या पदोन्नति आदि से संबंधित मुद्दे शामिल हैं, जो दूसरों को प्रभावित करते हैं, तो देरी से दावा पुराना हो जाएगा और विलंब/सीमा का सिद्धांत लागू किया जाएगा। जहां तक पिछली अवधि के लिए बकाया की वसूली की परिणामी राहत का प्रश्न है, आवर्ती/लगातार गलतियों से संबंधित सिद्धांत लागू होंगे। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय बकाया से संबंधित परिणामी राहत को आम तौर पर रिट याचिका दायर करने की तारीख से तीन वर्ष पहले की अवधि तक सीमित कर देंगे।"

(15) हालाँकि, अधिनियम की धारा 21 के तहत कोई सीमा निर्धारित नहीं की गई है, लेकिन सीमा अधिनियम के अनुच्छेद 137 के अनुसार, आवेदन दायर करने की सीमा तीन वर्ष है। याचिकाकर्ता 31.10.2002 को सेवानिवृत्त हुआ और उसने 25.09.2003 को आवेदन प्रस्तुत किया, जब याचिकाकर्ता/संस्थान द्वारा उसके अभ्यावेदन पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। ट्रिब्यूनल ने ठोस तर्क देकर सीमा के मुद्दे पर चर्चा की है, जिसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

(16) अब इस न्यायालय के विचारार्थ अगला प्रश्न यह है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है या नहीं? याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने कहा कि

याचिकाकर्ता को प्रत्यर्थी से जिरह करने का कोई अवसर नहीं दिया गया। अधिनियम की धारा 21 के तहत प्रस्तुत आवेदन का निर्णय आम तौर पर मुकदमे के पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों, शपथ-पत्रों और प्रति शपथ-पत्रों के आधार पर सारांशित तरीके से किया जाता था। इसीलिए प्रत्यर्थी द्वारा दायर प्रश्नगत आवेदन पर न्यायाधिकरण द्वारा निर्णय लिया गया। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि ट्रिब्यूनल के समक्ष कभी भी ऐसी कोई प्रार्थना नहीं की गई थी कि याचिकाकर्ता प्रत्यर्थी या किसी गवाह से जिरह करना चाहता हो। अब इस न्यायालय के समक्ष यह याचिका उठाने का कोई कारण नहीं है। इसलिए, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं किया गया है क्योंकि याचिकाकर्ता को नोटिस और सुनवाई का अवसर देने के बाद ट्रिब्यूनल द्वारा आक्षेपित निर्णय पारित किया गया है।

(17) न्यायालय को याचिकाकर्ता की दलीलों में कोई बल नहीं मिला कि वेतन और चयन पैमाने की बकाया राशि की गणना ट्रिब्यूनल द्वारा नहीं की गई है। ट्रिब्यूनल के सामने प्रत्यर्थी को दिए गए लाभों के बकाया की गणना करने का कोई अवसर नहीं था। अब यह याचिकाकर्ता और प्रत्यर्थी के बीच है कि वह नियमों के अनुसार प्रत्यर्थी की सेवा अवधि के अनुसार बकाया राशि की गणना करें और उसके अनुसार आगे बढ़ें।

(18) ऊपर बताए गए कारणों से, इस न्यायालय का मानना है कि इस रिट याचिका में कोई योग्यता नहीं है और यह खारिज किए जाने योग्य है। तदनुसार, इसे खारिज किया जाता है।

स्थगन आवेदन और सभी आवेदन (यदि कोई हो तो लंबित) भी खारिज कर दिए जाते हैं। लागत पर कोई निर्णय नहीं है।

(अनूप कुमार ढंड) न्यायमूर्ति

db/-

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल**,** द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के

उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।